ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-12* January- 2018
Innovation The Research Concept

मार्कण्डेय की कहानियों में अभिव्यक्त ग्रामांचल राजनीति के विविध स्वरूप

सारांश

मार्कण्डेय ने ग्रामीण राजनीति का जीवंत और प्रामाणिक दस्तावेज अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है। स्वाधीनता के पश्चात् शासन की बागडोर संभालने की होड़ में कई राजनीतिक पार्टियाँ अस्तित्व में आयीं। उनकी नीतियाँ, सिद्धांत, चुनाव जीतने के दाँव–पेंच, आपसी रंजिश आदि का सशक्त चित्रण रचनाकार ने किया है। स्वराज प्राप्ति के बाद देश की जनता का मोहभंग हो गया और देश में गाँधीवादी मूल्यों का हनन होने लगा। मार्कण्डेय की 'हंसा जाई अकेला' कहानी का हंसा, 'नौ सौ रुपये और एक ऊँट दाना' कहानी का बुचऊ आदि चरित्र इसके प्रतीकार्थ हैं। ग्रामीण परिवेश में परिव्याप्त सामाजिक दमन, राजनीतिक गठजोड़, राजनेताओं के दोहरे चरित्र, भाषणबाजी, बयानबाजी, तिकड़मबाजी आदि का विशद चित्रण इनकी कहानियों में दृष्टिगोचर होता है।

मुख्य शब्द : रचनाधर्मिता, प्रस्थापित, अंतर्दृष्टि, अर्थनीति, गबन, कुत्सित प्रतिस्पर्धा, सामर्थ्य, साँकल, तनमन्यता, तम्मू, क्रान्तिकारी, आतंक, व्यभिचार, दलबंदी।

विजय कुमार चौबे
अध्यापक,
हिन्दी विभाग,
पाण्डेश्वर कॉलेज
पाण्डेश्वर, बर्दमान,
पश्चिम बंगाल

प्रस्तावना

मार्कण्डेय मूलतः ग्रामीण संवेदना के कहानीकार हैं।इसलिए उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम चाहे कोई भी विधा रही हो उनका ग्राम की सोंधी मिट्टी से बना लोकमन सदैव उनमें विराजमान रहा है। वस्तुतः मार्कण्डेय एक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने ग्रामीण और शहरी परिवेश को न केवल देखा है, अपितु गहराई से भोगा भी है। उनकी सोच और समझ के दायरे में मूलतः वे समस्याएँ रही हैं जो जीवन के प्रगति क्रम को क्षरित करती हैं। एक सजग एवं प्रतिबद्ध रचनाकार होने के नाते उन्होंने इन समस्याओं को प्रमुखता से उठाया है और इस बात की ओर संकेत किया है कि इन समस्याओं की जिम्मेदार वर्तमान समय की वह व्यवस्था है जो यथास्थितिवादी शक्तियों को प्रश्रय देती है। यही कारण है कि मार्कण्डेय की रचनाधर्मिता सीधे व्यवस्था पर ही अपना लक्ष्य साधकर चली है।

अध्ययन का उद्देश्य

स्वाधीनता के पश्चात् ग्रामों में प्रविष्ट राजनीति में सेवा के नाम पर सत्ता, स्वार्थ और हिंसा के ही दर्शन होते हैं। ये सभी दोष तमाम विकृतियों को जन्म देते हैं। इस विकृत राजनीति ने ग्रामों के आपसी प्रेम–संबंधों में कड़वाहट घोल दिया है। गाँधी जी के विचारों को मानने वाले समाज–सेवकों को हाशिए पर डाल दिया गया है और साधारण जनता का जीवन इतना गंदला कर दिया गया है कि उनमें विवके शून्यता की प्रवृत्ति घर कर गई है। ग्रामीण परिवेश में पुलिस एवं न्याय व्यवस्था में राजनीतिक दखल तथा हुकुमशाही और नेताशाही के कारण सर्वत्र आतंक का साम्रज्य फैल चुका है। मार्कण्डेय की कहानियों में अभिव्यक्त ग्रामांचल राजनीति के विविध स्वरूप को समझने के क्रम में इसी उद्देश्य को आलेख में प्रस्तुत किया गया है।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोधपत्र लेखन हेतु विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण

आजादी के बाद ग्रामांचल के राजनैतिक परिदृश्य में काफी बदलाव आया है। रातनीतिक परिवर्तन ने समाज के प्रत्येक स्तर को प्रभावित किया है। लोग अपने अधिकारों के प्रति सचेत होने लगे हैं। संविधान के अनुसार भारत एक प्रजातांत्रिक देश है। परन्तु आजादी के कुछ वर्षों बाद ही देश की राजनीति में बड़ा परिवर्तन आया। जिसका विशेष प्रभाव भारत के ग्रामांचल क्षेत्रों में पड़ा। मार्कण्डेय ने अपनी कहानियों के माध्यम से स्वातंत्र्योत्तर कालीन ग्रामीण जीवन

से संबद्ध वर्ग, जाति, भ्रष्टाचार, सत्ता, पूँजी, हिंसा और वोट की राजनीति, चुनावतंत्र और स्वार्थ केन्द्रित राजनीति आदि तमाम कुरूपताओं का यथार्थ चित्रण किया है, जो राजनीतिक विषमता और समस्याओं को उत्पन्न करती हैं। इस दृष्टि से उनकी 'नौ सौ रुपये और ऊँट दाना', 'प्रलय और मनुष्य', 'हंसा जाई अकेला', 'बीच के लोग', बवंडर', 'बातचीत', 'दौने की पत्तियाँ', 'हल लिए मजूर', 'एक काला दायरा' आदि कहानियाँ विशेष महत्वपूर्ण हैं।

भारतवर्ष में स्वतंत्रता के पूर्व से ही जातिगत राजनीति का वर्चस्व रहा है। वर्तमान संदर्भ में राजनीतिक क्षेत्र में जाति का बढ़ता प्रभाव देश के विकास तथा राष्ट्रीय एकता के लिए घातक बनता जा रहा है। कदाचित् हमारी सामाजिक व्यवस्था ही जातिगत समीकरण पर अवलम्बित है। जबकि, राजनीति का उत्थान समाज से ही होता है। आजादी के बाद संविधान ने विषमता को दूर करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बदहाली परिस्थितियों में एक ओर निम्न जातियों को राजनीति के क्षेत्र में प्रविष्ट करने का अवसर मिला है तो दूसरी ओर समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के लिए उन्हें प्रस्थापित समुदाय के साथ संघर्ष भी करना पड़ रहा है।

महात्मा गाँधी ने देश की जातिगत विषमता को मिटाना चाहा था, किन्तु परवर्ती प्रशासन व्यवस्था ने जातिगत भेद–भाव को प्रश्रय देकर जाति के नाम पर वोट उगाही की नई व्यवस्था विकसित कर ली है। फलस्वरूप आज समूचे देश की राजनीति पर जातिवाद का प्रभुत्व परिलक्षित होता है। मार्कण्डेय की 'नौ सौ रुपये और ऊँट दाना' कहानी का बुचऊ कहता है – "क्या हो रहा है। धरम के नाव पर, जाति के नाव पर वोट उगहात है, ठाकुर के ठाकुर, बाह्मन के बाह्मन, कहाँ गई गरीबी? कहाँ गया छुवा–छूत .....? अब विचार नहीं रहा, बस वोट रह गया है।"[1] इससे राजनीति के क्षेत्र में जातिवाद का प्रभुत्व स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। देश में प्रत्येक जाति का एक संगठन तैयार हो रहा है जो अपनी–अपनी जाति का प्रतिनिधित्व करता है। क्षेत्र विशेष के वोटरों की संख्या, उम्मीदवार का आरक्षण और उम्मीदवार का उस क्षेत्र में वर्चस्व आदि तथ्यों को केन्द्र में रखकर राजनीतिक दल चुनावी टिकटों का बँटवारा करते हैं। इस तरह राजनेता प्रजातंत्र के नाम पर जातिगत समीकरण का प्रयोग कर समाज में जातिवाद को बढ़ावा देते हुए लक्षित होते हैं। स्वतंत्रता आन्दोलन में धीमा पड़ा जातिगत समीकरण स्वाधीनता के पश्चात् तीव्र गति से उभरकर सामने आ रहा है। यही कारण है कि स्वाधीनता के 70 वर्ष पूरे होने पर भी देश की सामाजिक–राजनीतिक दशा में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ बल्कि स्थितियाँ पहले के अपेक्षाकृत और भी बदतर होती जा रही हैं। मार्कण्डेय ने अपनी सूक्ष्म अंतर्दृष्टि के सहारे राजनीति की दिशा में बाधक जातिगत भेद–भाव की समस्या को प्रस्तुत किया है। उन्होंने 'बीच के लोग' कहानी में ग्रामीण परिवेश में जातिगत समीकरण की राजनीति से उत्पन्न संघर्ष का चित्रण किया है। ग्रामांचल में भूमि के अधिकार को लेकर उच्च वर्ग एवं निम्नवर्ग के लोगों में विवाद खड़ा हो जाता है। आपसी लड़ाई का रूपान्तरण सामाजिक संघर्ष में होता है। इसमें सवर्णों की निम्नवर्गीय लोगों के प्रति ईर्ष्या एवं द्वेष की भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। ठाकुर हरदयाल और हरिजन बुझावन का लड़का मनरा दोनों अपने–अपने वर्गों के लोगों को एकत्रित कर भूमि पर अधिकार करने के लिए निकल पड़ते हैं और गाँव में विनाशलीला आरम्भ हो जाती है। फउदी दादा परिस्थिति को भाँप कर अपने मन की आशंका प्रकट करते हुए कहते हैं – लगता है, ठाकुर बाह्मण सब एक साथ हो गए हैं और इस गाँव में कब का सुलगता बड़ी–छोटी जात का संघर्ष फ़न फैलाकर परानपुर को आज डस लेगा। इससे ग्राम जीवन में सदियों से धधकती जातिगत भेद–भाव की आग स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। कहानी में जहाँ एक ओर सामाजिक असंगति का उद्घाटन हुआ है वहीं दूसरी ओर अछूत जातियों में जागृत होती राजनीतिक चेतना दिखाई पड़ती है।

आजादी मिलने पर आम जनता खुश हो गयी। अपनी सरकार लोगों के लिए प्रयत्न करेगी यह सोचकर वे सुनहरे भविष्य की कल्पना कर रहे थे। प्रशासन ने जनतांत्रिक शासन व्यवस्था को आत्मसात् कर शासन प्रारम्भ किया। किन्तु राजनीति को कुछ स्वार्थी और अवसरवादी राजनेताओं ने अपने निजी लाभवश गंदला कर दिया। वे गद्दी का दुरुपयोग करने लगें। सिद्धांतों का गला घोंटकर दल बदलने वाले मौकापरस्त नेता राजनीति में उभरकर सामने आए। मार्कण्डेय ने अपनी 'प्रलय और मनुष्य' कहानी में बाढ़ की स्थिति में जलचर जीवों के संवाद के माध्यम से मौजूदा राजनैतिक स्थितियों पर व्यंग्य कसा है –"यह एक सदस्य है असेम्बली का। राजनीति से इसका कोई संबंध नहीं, पर राजनीति के बिना अर्थनीति का कोई मतलब नहीं होता प्रजातंत्र में, इसीलिए चीनी मिल से कमाये दो लाख रुपये लगा कर इसने धारा–सभा की एक सीट खरीद ली। कभी उस पर बैठ जाता, कभी नहीं, पर इस कुर्ते की हर जेब में इसने बीसियों संस्थाएँ पाल ली थीं। वे दूध देती थीं। जब मन में आता, दुह लेता। 'महिला–सेवा–कर्म' से लेकर 'बाल विचार–परिषद' तक और 'साहित्य–धर्म' से लेकर 'लोक– जीवन अध्ययन मण्डल' तक अपनी सेवाओं का विस्तार किये था। अब सरकार को कितने चरखे चाहिए, और किस विभाग को कितनी वर्दियाँ चाहिए, फिर चरखे और वर्दी को एक रुपये में बनवा देना और शेष रुपयों को आमदनी के भण्डार में जमा कर लेना, इसके बाएँ हाथ का काम था।"[2] इससे ज्ञात होता है कि राजनीति और अर्थनीति एक दूसरे से संबंधित है। सत्ताभोगी व्यक्ति अधिक से अधिक धन संचय करने हेतु प्रयत्नशील रहता है।

मार्कण्डेय की 'बवंडर' शीर्षक कहानी वर्तमान अवसरवादी राजनीति को बेनकाब करती है। प्रस्तुत कहानी में मास्टर दसईं मुसहरों का वोट बलवन्त राय की पार्टी को दिलाता है जिससे कि मुसहरों को ग्राम–समाज की भूमि प्राप्त हो सके। लेकिन चुनाव के बाद बलवन्त राय अपनी बात से मुकर जाता है और भूमि उन गरीबों को देने के बदले स्वयं गबन कर लेता है – "बलवन्त राय अन्याय पर हैं। कहने ही को जनता बने हैं। जब सरकार ग्राम–समाज की जमीन हरिजनों को आबादी के लिए बाँट रही है तो उन बेचारों को पहले ही क्यों नहीं दे दी गयी आखिर। उनसे बड़ा भूमिहीन यहाँ कौन है? वोटवा भी तो उन सबों ने उन्हीं को दिया था। दसई ने कतार बाँधकर

मुसहरों का वोट गिरवाया था। स्वारथ में आदमी को अंधा नहीं होना चाहिए।"[3] इससे विदित होता है कि अवसरवादी और भ्रष्ट नेता अपने स्वार्थ–सिद्धि हेतु भोले–भाले ग्रामीण जन को मिथ्या आश्वासन देते हैं और बाद में अपनी बात से मुकर जाते हैं।

सत्ता में अपनी जगह बरकरार रखने के लिए राजनेता कुत्सित नीतियों में उलझ से गये हैं। परिणामस्वरूप एकता, समता, भाई–चारा और सामाजिकता के स्थान पर स्वार्थ एवं सत्तालोलुपता की प्रवृत्ति बढ़ गई है। मार्कण्डेय ने स्वातंत्र्योत्तर युगीन सत्ता केन्द्रित राजनीति का यथार्थ स्वरूप चित्रित किया है। उनकी 'हल लिए मजूर' कहानी का फुनई सत्ता की राजनीति को भली–भाँति समझने लगा है। उसे स्वराज और गाँधीवादी आदर्शों के ढकोसलों से चिढ़ होने लगी है। वह जानता है कि राजनेता लच्छेदार बातें करके अपनी रोटी सेंकने में लगे हैं। इसीलिए वह रफ़ीक से उबकर कहता है – "बताओ तो जरा क्या बदला इतने दिन में। कहाँ गयीं वे भूमि सुधार और जोत की हदबंदी की बातें। साव की बात सुनी रहे हो। ठाकुर की भी पौ बारह है। हर कमेटी में नाम सबसे ऊपर है। खाद, ट्रैक्टर, कुआँ, कर्ज जहाँ भी देखो वह बैठा है। लड़का जीप पर युवा कांग्रेस युवा जनता बना घूमने लगा है। दूसरी आजादी .... जनता का राज .... कुछ नहीं, यह सब धोखा–धड़ी है। गरीब जनता को मूर्ख बनाकर वोट उगाहने की नीति है।"[4] इससे स्पष्ट होता है कि स्वाधीनता के वर्षों बाद भी गरीबों और आम जनता की समस्या जस–की–तस बनी हुई है। और राजनीतिक गलियारे के लोग सत्ता प्राप्त करने के लिए झूठे वायदे और विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देते हैं।

स्वाधीनता के पूर्व देश की जनता का मुख्य लक्ष्य 'स्वराज' प्राप्ति था। उसकी प्राप्ति के लिए अनेक लोगों ने अपने प्राणों का बलिदान किया। खून की नदियाँ बहायी तब जा के कहीं सफलता प्राप्त हुई। किन्तु स्वाधीनता के पश्चात् राजनेताओं ने जन आकांक्षाओं की पूर्ति की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। भरसक उन्होंने सत्ता का मोह और लुभावने वादे का झांसा देकर कुर्सी से चिपके रहने की दुर्नीति अपना ली है। सत्ता की प्रतिस्पर्धा में अपने प्रतिद्वंद्वियों को दबाने के लिए अनेक प्रकार के छल–प्रपंच और हथकंडों का सहारा लिया जा रहा है। संघर्ष और स्वार्थों की टकराहट के कारण ग्रामीण राजनीति किस हद तक मूल्यहीन होती जा रही है, उसे मार्कण्डेय ने प्रस्तुत किया है। उनकी 'हंसा जाई अकेला' कहानी में ग्रामीण समाज के राजनीतिज्ञों की तिकड़मबाजी की प्रवृत्ति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। प्रस्तुत कहानी में सुशीला गाँधीजी के जीवन–मूल्यों से प्रभावित और कांग्रेस की कर्तव्यपरायण सेविका हैं। उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन राजनीति के प्रति समर्पित कर दिया है। लेकिन जब सुशीला जी हंसा के साथ मिलकर कार्य करती हैं तो उनके विरोध में ग्राम में तरह–तरह की बातें फैलाई जाती हैं। हंसा और सुशीला के आपसी रिश्तों की झूठी खबरें शीर्ष नेताओं तक पहुँचायी जाती हैं –"दूसरे दल के लोगों ने चिट्ठियाँ भिजवायीं। सुशीला जी को यहाँ से बुला लिया जाए। जनता पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है।.... चुनाव के दो दिन पहले उन्हें नोटिस मिली वह बापू के आदर्शों को तोड़ रही हैं, इसीलिए उन्हें काम से अलग किया जाता है।"[5] इस तरह विपक्षी दल के छल–प्रपंचों के चलते सुशीला जी बापू के छद्म सेवकों के द्वारा जनता से अलग कर दी जाती हैं।

मार्कण्डेय ने स्वातंत्र्योत्तर युग में ग्रामांचल के राजनीतिक क्षेत्र में बढ़ते भय तथा आतंक के खतरे को अपनी कहानियों में उद्घाटित किया है। जनता में भय तथा खौफ फैलाकर अपने पक्ष में मतदान करवाना वर्तमान समय की चुनावी प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। मार्कण्डेय की 'दौने की पत्तियाँ' कहानी में तिवारी जी बड़े भू–स्वामी हैं। चुनाव के समय वे सिंचाई मंत्री का तन–मन–धन से मदद करते हैं। लोगों को डरा कर उनके पक्ष में मतदान करवाते हैं– "कितने आसामी तो गाय–बैल की तरह बाड़े में रात भर बंद किये रहे और सवेरे ही लारी में भर–भर कर उन्हें पोलिंग स्टेशन पहुँचा कर वोट लिया गया था। लोग कहते हैं, तिवारी जी ने कमाल कर दिया था। सिंचाई मिनिस्टर तो इतने खुश कि तिवारी जी की अकल के गुलाम हो गये, तब से।"[6] इससे स्पष्ट होता है कि सामर्थ्य के बल पर स्थानीय बाहुबली नेता गाँव के लोगों के ऊपर अपना वर्चस्व और प्रभुत्व जमाएँ रहते हैं।

'बीच के लोग' कहानी में जमींदार हरदयाल बुझावन की जमीन पर हक जमाने के लिए आतंक का सहारा लेता है। जमींदार का बेटा अपने दोस्तों के साथ मिलकर बुझावन के पूरे परिवार को खत्म करने का षड्यंत्र रचता है। रात को कई लोग मिलकर उसके खेत के आलू उखाड़ देते हैं। बुझावन की मड़ई के पास दो स्वयं सेवक हथियार लेकर खड़े थे कि यदि बुझावन उठे तो वहीं जान से मार दें। खुद हरदयाल बंदूक लेकर ग्राम की ओर मुख किए इसलिए बैठा था कि जो कोई आएगा उस पर वह गोली चला देगा। इतना ही नहीं अगर भाग–दौड़ हुई और मनरा का दल लड़ने के लिए आएगा तो उधर उसका घर और मड़ई फौरन आग के हवाले कर दिया जाएगा, वहाँ खड़े स्वयंसेवकों को यह बता दिया गया था कि पहुँचते ही बखरी की साँकल बाहर से लगा ले और यदि जाग–जूग हो तो बिना यह सोचे कि घर में कौन है, वह जलेगा कि बचेगा, घर में चारों ओर आग लगा दे। प्रस्तुत संदर्भ से यह प्रकट होता है कि ग्राम में जमींदार लोग सत्ता एवं धन के बल पर गरीबों का दोहन करते हैं। मार्कण्डेय ने राजनीतिक स्तर पर चलनेवाली भय और आतंक की समस्या को यथार्थ के धरातल पर उतारा है।

राजनीतिक चुनाव प्रचार के समय भाषण देना और बयानबाजी करना जैसे आम बात हो गई है। चुनाव के समय स्थानीय राजनेता अपने पार्टी के बड़े–बड़े नेताओं को आमंत्रित करते हैं। पूरी तन्मयता के साथ सभाओं का आयोजन किया जाता है। भाषण एवं बयानबाजी होती है और राजनेता प्रस्थान करते हैं। एक बार चुनाव खत्म होने के बाद फिर अगले चुनाव तक इन राजनेताओं के दर्शन नहीं होते। फिर अगले चुनाव में ही उनका संपर्क जनता से होता है।

वर्तमान चुनाव की नीति में भाषण कौशल और बयानबाजी प्रचार का जरूरी हिस्सा है। मार्कण्डेय की

कहानी 'हंसा जाई अकेला' में चुनाव प्रचार का वर्णन देखने को मिलता है। कांग्रेस जिला कमेटी के लोग सुशीला जी को कांग्रेस का प्रचार करने के लिए गाँव में भेजते हैं। सुशीला हंसा के साथ मिलकर चुनाव प्रचार करती हैं। हंसा गाँव के लोगों को भाषण सुनाता है – "बाबू साहब जो कहें मान लो! पूड़ी–मिठाई राजा के तम्मू में खाओ! खर्चा–खोराक बाबू साहब से लो और मोटर में बैठो! लेकिन कँगरेस का बक्सा याद रखो! वहाँ जा कर, खाना–पीना भूल जाओ? कँगरेस तुम्हारे राज के लिए लड़ती है। बेदखली बंद होगी। छुआछूत बंद होगा। जनता का राज होगा। एक बार बोलो, बोलो गन्हीं महात्मा की जय! ... जय! ..."[7]

स्वाधीनता के पश्चात् प्रशासन ने विकास खंडों के अनुसार ग्रामीण समाज के आर्थिक विकास के लिए अनेक लघु एवं कुटीर उद्योगों की घोषणा की। सरकारी अधिकारी इन कार्यक्रमों के विषय में जानकारी देने हेतु गाँव में जाकर लोगों को भाषण देते हैं। मार्कण्डेय ने 'आदर्श कुक्कुट–गृह' कहानी में सरकारी मुर्गी पालन की योजना के यथार्थ स्वरूप को उभारा है। ग्राम में कुक्कुट–गृह के उद्घाटन हेतु कलेक्टर आते हैं और विकास योजनाओं द्वारा गाँव की आर्थिक स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने की बात लोगों को समझाते हैं –"फिर आदर्श कुक्कुट–गृह की स्थापना पर खुशी प्रकट करते हुए उन्होंने बताया कि अकेले इस योजना से यह गाँव शहरों से भी ज्यादा समृद्ध बन सकता है। किस तरह कुछ दिनों में गृह के पास बिजली–पानी की कलें और अपनी मोटर हो जाएँगी जो शहरों में अंडे पहुँचाएँगी ...इन सबका उन्होंने ब्योरेवार विवरण कह सुनाया।"[8] सरकारी अधिकारी इस तरह भाषण देकर भोले–भाले जनता को सुनहरे स्वप्न दिखाकर उनकी आकांक्षाएँ जगाते हैं जो कभी पूरी नहीं हो पाती।

साधारणतः देश की आंतरिक सुरक्षा एवं शांति व्यवस्था सुदृढ़ बनाये रखने का दायित्व पुलिस–विभाग का है। किन्तु कभी–कभी राजनैतिक दबावों एवं अनैतिकता के कारण पुलिस अपने अधिकारों का दुरुपयोग करती है। राजनैतिक दखल और भ्रष्टाचार के कारण पुलिस अपने दायित्व का निर्बाह निष्ठापूर्वक नहीं कर पाती है। फलस्वरूप नैतिक–पतन, भय, आतंक, बेईमानी, छल–प्रपंच और भ्रष्टता बढ़ती जाती है। मार्कण्डेय की 'बातचीत' कहानी पुलिस विभाग में व्याप्त भ्रष्टता को बेनकाब करती है। गाँव में जमींदार एवं भू–स्वामी वर्ग निजी हितों के कारण गाँव के चोर और डाकुओं को कानूनी संरक्षण देता है। प्रस्तुत कहानी में जग्गी का पिता एक डाकू है जिसे गयादीन ठाकुर का संरक्षण प्राप्त है। ठाकुर के इशारे पर एक–एक रात में हजारों का सोना–चाँदी अथवा पैसों की चोरी करना, किसी को मटियामेट कर देना उसके लिए बाएँ हाथ का खेल था। जग्गी का पिता एक बार किसी साहूकार के घर डकैती करता है और पुलिस को सूचना मिल जाती है – "दूसरे दिन पुलिस की पगड़ी से सारा गाँव लाल हो गया। कोई घर के बाहर तक नहीं निकलता था, पर वाह रे ठाकुर और वाह रे शान! दरवाजे पर कड़ाहियाँ चढ़ गयी थीं। पुलिस वाले खा–पी रहे थे और जग्गी का बाप वहीं ठाकुर के पास बैठा, चिलम पीता रहा। शाम हुए थानेदार ने ठाकुर को बुला कर कहा, 'हमारे पास घोड़ा नहीं है, ठाकुर!'

– ठाकुर ने कहा, 'कल सूरज निकलने से पहले पहुँच जाएगा।'"[9] इससे पुलिस–विभाग में फैले व्यभिचार का पता चलता है। इस तरह पुलिस–व्यवस्था की पथभ्रष्टता के कारण बेगुनाहों को सजा मिलती है और गुनहगार सरेआम घूमता है।

मार्कण्डेय की 'एक काला दायरा' कहानी वर्तमान संदर्भ में कानून और न्याय के बदलते स्वरूप को प्रस्तुत करती है। कहानी का नायक पाँचू बेगुनाह होकर भी सजा भुगतने वाला सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधि है। प्रस्तुत कहानी में पाँचू अपनी नववधू चम्पा को साथ लेकर गाँव जा रहा था, किन्तु रास्ते में रात को वह अहीरों की बस्ती में रुकता है। वहाँ छल से उसकी स्त्री के साथ बलात्कार किया जाता है और फिर उसे जान से मार दिया जाता है। चंपा के असली हत्यारे पुलिस को घूस देकर पाँचू को ही उसकी पत्नी के हत्या–काण्ड में फँसाते हैं। पुलिस न्यायालय में पाँचू पर केस चलाती है और न्यायालय के सामने झूठे गवाह और सबूत प्रस्तुत कर पाँचू को सजा दिलायी जाती है– "और अदालत पलक मारते उठ गयी थी। पाँचू बाहर पुलिस की गाड़ी से जेल की ओर लौटने लगा तो उसे मजिस्ट्रेट की इतनी ही बात याद थी कि खून के सीधे केस के कारण मुल्जिम पाँचू पर दफ़ा 302 लगाई जाती है।"[10] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि पुलिस विभाग की कुरीतियों के कारण न्यायालय निरपराधी को अपराधी प्रमाणित कर देता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आजादी के बाद देश की गद्दी संभालने वाले राजनेता सत्ता की गंदले राजनीति में आकुंठ डूब गए हैं। निर्वाचन के दौरान जनता को सुधार कार्यों का हवाला देने वाले जनप्रतिनिधि अपने स्वार्थों में संलिप्त हो गए हैं। सत्ता में अपनी प्रभुता कायम रखने के लिए किस प्रकार जातिगत समीकरण का प्रयोग किया जाता है उसका सही रूप मार्कण्डेय की कहानियों में लक्षित होता है। ग्रामीण समाज के बदलते स्वरूपों में मानव मन को उत्तरोत्तर घेरती भ्रष्ट एवं सत्तालोलुप राजनीति,दलबंदी, बयानबाजी, भाषणबाजी, छल–प्रपंच, भय, मौकापरस्ती, वर्चस्व की राजनीति आदि का सार्थक अभिव्यक्ति मार्कण्डेय की कहानियों में हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ.–112*
2. *वही, पृ–233*
3. *मार्कण्डेय, हलयोग (कहानी संग्रह) लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2012, पृ–61*
4. *मार्कण्डेय, हलयोग (कहानी संग्रह) लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र•0 सं–2012, पृ–76*
5. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ.–219*

6. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ–202*
7. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ–218*
8. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ–267*
9. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ–207*
10. *मार्कण्डेय, मार्कण्डेय की कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, 15–ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्र0 सं–2002, पृ–457*